RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल.-011/2021-23

ओ३म्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 48, अंक : 5 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 16 मई, 2021

विक्रमी सम्वत् 2078, सृष्टि सम्वत् 1960853122

दयानन्दाब्द : 197 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–48, अंक : 5, 13-16 मई 2021 तदनुसार 3 ज्येष्ठ, सम्वत् 2078 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली एवं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के आह्वान पर 3 मई 2021 को अन्तर्राष्ट्रीय यज्ञ दिवस के अवसर पर हर घर यज्ञ, घर घर यज्ञ योजना के अन्तर्गत वैश्विक महामारी कोरोना से मुक्ति की कामना करते हुए रोग निवारण यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर नीचे दिए गये चित्रों में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी, महामन्त्री श्री प्रेम कुमार जी, उपप्रधान श्री देवेन्द्र शर्मा जी, कोषाध्यक्ष श्री सुधीर शर्मा जी, रजिस्ट्रार श्री अशोक परूथी जी तथा उपप्रधान श्रीमती राजेश शर्मा जी अपने-अपने परिवार के साथ यज्ञ करते हुए।

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्

ले.-देवनारायण भारद्वाज रामघाट रोड-अलीगढ़

दो मित्र उद्यान में बैठकर बात कर रहे थे अपने पूर्वजों की महिमा का बखान कर रहे थे। क्षितिज की ओर देखकर एक बोला-हमारे बाबा ने इतना बड़ा दालान बनवाया था, जो क्षितिज से भी आगे निकला हुआ था। दूसरा बोला-हमारे बाबा भी बड़े चमत्कारी थे। उन्होंने इतना लम्बा बाँस बनवाया था, जिसको आकाश में घुमाकर बादलों से बरसात करवा लेते थे। पहले मित्र ने यह सुनकर पूछ लिया-वे उस बाँस को रखते कहाँ थे? दूसरे ने सहज भाव से उत्तर दिया-तुम्हारे बाबा के दालान में। यह बात आज भी उन लोगों पर सटीक बैठती है, जो बड़े गर्व के साथ कह दिया करते हैं-हमारे बाबा जी पक्के आर्यसमाजी थे। उनका हवन कुण्ड विशाल था और उसकी धूम आसमान तक जाती थी। ऐसी एक घटना का मुझे सामना करना पड़ा।

स्वर्ण वर्गीय सामाजिक संस्था के अधिकारीगण पर्व विशेष पर स्मारक पार्क में मुझ से यज्ञ का आग्रह करने लगे। वह दिन आ गया और मैं वहाँ पहुँच गया। पार्क की भीड़ में सज-धज कर आए हुए एक शीर्ष व्यक्तित्व यहाँ-वहाँ व्यस्त थे। वे समाज के सर्वाधिक सम्पन्न जनों में से एक थे। मैं जब यजमान के आसन को भरने के लिए आह्वान करने लगा, तो अधिकारियों ने उन्हीं महानुभाव को लाकर बैठा दिया। पहले से ही बैठे स्त्री-पुरुषों के समूह को हर्ष हुआ और उन्हें यजमान पद प्राप्ति का गर्व हुआ। उन्हें देखकर यज्ञारम्भ की मेरी प्रक्रिया इसलिए रुक गई, क्योंकि वे मुख में पूरा पान चबाते हुए आसन पर बैठ गये। वे मुझे भला क्या जानते होंगे, जो मैं सीधे मुख शुद्धि के लिये सचेत करता। यह कार्य मैंने मुख्य पदाधिकारी के माध्यम से कराया। आशीर्वाद शान्ति पाठ सहित यज्ञ पूर्ण हुआ। वेदी पर तो उन्होंने मुझे दक्षिणा नहीं दी, किन्तु एक कक्ष में खड़े होकर संकेत से मुझे बुलाया और हाथ में दक्षिणा राशि निकालते हुए बताना प्रारम्भ किया-मेरे बाबा पक्के आर्य समाजी एवं निष्ठावान् याज्ञिक थे। लम्बी रेल यात्राओं में भी नित्यकर्म से निवृत्त होकर यज्ञ अवश्य करते थे। इसके लिए उनकी यज्ञ पेटिका साथ चलती थी। मैंने कहा, बहुत सुन्दर। 'वयं स्याम पतयो रयीणाम्' (ऋ. 10.121.10) के जाप से ही तो आप धनैश्वर्यों के स्वामी बने हैं। मैंने मन में सोचा-आपने बाबा के धन को तो पकड़ लिया, किन्तु यज्ञ ऐश्वर्य को छोड़ दिया।

यज्ञ करने से भी क्या होता है। सर्वांश में नहीं, अधिकांश में यज्ञ करने वाला 'स्वाहा-इदं न मम' का उच्चारण करते हुए घृत सामग्री की आहुतियाँ देते रहते हैं तथा इसकी सुगन्ध को फैलाते रहते हैं। इस प्रकार वे बाह्य वातावरण को तो शोधित कर लेते हैं किन्तु इसके सार स्वत्व से अपने अन्तःकरण की परिशोधन प्रक्रिया पर किञ्चित् ध्यान नहीं देते और जो मन्त्रोच्चारण करते हैं, उससे उनका आचरण उत्कृष्ट न होकर कृष्ट या निकृष्ट ही बना रह जाता है। यही कारण है कि घर-परिवार हो अथवा संगठन, सर्वांश में नहीं तो अधिकांश में देव पूजा (बड़ों का मान) पारस्परिक संगतीकरण एवं दान के दुरुपयोग के उदाहरण परिलक्षित होते हैं। इसी यज्ञ वेदी पर सरदार अर्जुन सिंह, पौत्र सरदार भगत सिंह, पं. राम प्रसाद बिस्मिल ही नहीं, अनेक आर्य मनीषियों ने प्रेरणा प्राप्त कर वेदोत्थान व राष्ट्र निर्माण के लिए अपने जीवन अर्पित कर दिए थे। उनके समर्पण की नींव पर संगठन का प्रासाद तो खड़ा हो गया, किन्तु आज उसकी दीवारों में लगी दीमक से रक्षा करने वालों की प्रतीक्षा ही बनी रहती है।

स्थिति इतनी निराशाजनक भी नहीं है। जैसे एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है और जैसे एक बूँद विष सम्पूर्ण दुग्ध घट को विषैला कर देता है, वैसे ही थोड़े स्वार्थी अभियोगवादियों ने विराट् संगठन को विघटन का जामा पहना दिया लगता है। अन्यथा आज भी गुरुकुल व शिक्षा जगत् के आचार्य, ब्रह्मचारी, उपदेशक राष्ट्र में अपने आदर्श से आर्यकरण के अभियान में लगे हैं। देश-विदेश, राष्ट्र संघ, सर्वत्र विश्व अहिंसा दिवस, विश्व योग दिवस, वेद संहिता संरक्षण, अग्निहोत्र एवं शाकाहार दिवस आदि के रूप में सात्विक संस्कार जागरण के अभियान चल पड़े हैं।

यज्ञनिष्ठ लोग चलती ट्रेन में भी अपना दैनिक यज्ञ कर लेते हैं। वैसे ही रामायण प्रेमी लोग भी प्रभातकाल में स्वच्छ होकर रामायण का पाठ करके ही सुख शान्ति अनुभव करते हैं। मन्त्रों के अर्थों को समझना पड़ता है; पर रामायण तो लौकिक भाषा में अर्थ स्पष्ट करती चलती है। यह सहज सुबोध अर्थ भी जीवन व्यवहार में उतरना दुर्लभ होता है। इसमें भी आर्योपदेशक यदा कदा मार्ग दर्शन करते देखे जाते हैं।

प्रयागराज एक्सप्रेस की आरक्षण श्रेणी में ऐसे ही एक यात्री अपनी सीट पर बैठकर उच्च स्वर में रामायण का पाठ करते जा रहे थे और भाव विह्वल होकर आँसुओं की लड़ी बहाते जा रहे थे। यह देखकर उपदेशक महोदय ने उनकी रामायण निष्ठा की प्रशंसा की और पाठ प्रसंग जानने की इच्छा की। रामायणी जी ने बताया-इस समय राम-भरत मिलाप का प्रसंग चल रहा है। निश्छल प्रेम प्रवाह को अनुभव कर मेरे नेत्रों से अश्रु प्रवाह हो गया। अच्छा तो आप प्रयागराज तीर्थ में त्रिवेणी स्नान के लिए जा रहे होंगे। यात्री ने कहा-नहीं। अच्छा तो पवित्र भारद्वाज आश्रम दर्शनार्थ जा रहे होंगे। यात्री ने कहा-नहीं। प्रादेशिक शिक्षा निदेशालय या राज्य लोक सेवा आयोग मुख्यालय में किसी काम से जा रहे होंगे। यात्री ने कहा-नहीं। फिर तो प्रयागराज विश्वविद्यालय में अपने किसी प्रोफेसर मित्र से मिलने जा रहे होंगे। यात्री ने कहा-नहीं, और आगे प्रसंग बढ़ाते हुए वे बोल पड़े-महाशय! आपको पता नहीं प्रयागराज में उच्च न्यायालय भी है। मैं वहीं जा रहा हूँ। उपदेशक जी बोले-तो आप प्रयागराज नहीं इलाहाबाद जा रहे हैं।

अच्छा तो यह बताइये, वहाँ आपका क्या प्रकरण लम्बित चल रहा है? क्या बतायें, बड़े भाई से एक लघु भूखण्ड के लिये अभियोग चल रहा है। दसियों वर्ष हो गये, निर्णय नहीं हो पा रहा है। पड़ोस में रहते हुए भी बोलचाल बन्द है। उपदेशक जी ने कहा-रामभरत मिलाप से तो आप इतने प्रभावित हैं कि अश्रुपात कर बैठते है। आपने कभी सोचा है कि अयोध्या जैसे चक्रवर्ती साम्राज्य के सिंहासन को दोनों भाइयों ने गेंद के समान ठोकर मारते हुए एक खेल बना दिया था। भरत ने अयोध्या से दूर नन्दीग्राम में एक तपस्वी के रूप में राम की प्रतीक्षा करते हुए शासन संचालन किया था। एक ओर राम भरत की मिलाई पर भावुकतावश रुलाई करते हैं और अपने ही बड़े भाई से लड़ाई करते हैं। मेरा परामर्श है आगे से या तो रामायण की पढ़ाई बन्द करें या बड़े भाई से लड़ाई बन्द करें। स्टेशन आया। उपदेशक जी ने उतरते-उतरते आर्य समाज जाने की बात कहते हुए विदाई ली। न्यायालय पहुँचने पर बड़े भाई के चरण पकड़े और क्षमा याचना की और बोले, आज से भूखण्ड आपका है। अभियोग समाप्त होता है। मुझे आपका अखण्ड प्रेम चाहिए, भूखण्ड नहीं। अब साथ-साथ हँसते हुए वापस लौटेंगे। पहले आर्य समाज चौंक चलकर उपदेशक जी से मिलकर उनका आभार व्यक्त करते हैं। दोनों भाई वहाँ जाकर उपदेशक से मिलते हैं। उन्हीं के समक्ष बड़े भाई घोषणा करते हैं कि छोटे भाई का परिवार बड़ा है, इन्हें आवश्यकता है, इसलिए भूखण्ड इनके परिवार के लिए छोड़ता हूँ। आर्योपदेशक ने भरत मिलाप प्रत्यक्ष घटित कर दिया।

उस सन्ध्या उपदेशक महोदय ने जिस प्रवचन को प्रस्तुत किया, वह निम्नांकित मन्त्र पर आधारित था। प्रयाग में याग चर्चा यूँ हुई-आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्। प्रजापतेः प्रजाऽभूम स्वर्देवाऽगन्मामृताऽगन्मामृताऽअभूम।।

(यजु. 9.21)

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

ऑक्सीजन की कमी दूर करने के लिए पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता

कोरोना महामारी के कारण पूरे विश्व में हाहाकार मचा हुआ है। इस बीमारी ने सम्पूर्ण विश्व को अपनी चपेट में ले लिया है। इस महामारी के कारण सम्पूर्ण व्यवस्था चौपट हो गई है। कोरोना पीड़ित मरीजों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। वर्तमान में भारत में कोरोना संक्रमित मरीजों का आँकडा प्रतिदिन 4 लाख से ऊपर जा रहा है। ऐसी दशा में स्वास्थ्य विभाग इस महामारी के सामने पंगु नजर आ रहा है। पूरे देश में अस्पताल मरीजों से भरे हुए हैं। अस्पतालों में मरीज के लिए खाली बेड उपलब्ध कराना रेत में चीनी के कण ढूँढने के बराबर है। कुछ दिनों से अस्पतालों में ऑक्सीजन की कमी चर्चा का विषय बना हुआ है। प्रतिदिन ऑक्सीजन की कमी से लोगों की मृत्यु होने की खबर अखबारों की सुर्खियां बनी हुई हैं। चारों तरफ ऑक्सीजन के लिए हाहाकार मचा हुआ है। राज्य सरकारें एक दूसरे के ऊपर ऑक्सीजन की सप्लाई रोकने और चोरी करने के आरोप लगा रहे हैं। देश की राजधानी दिल्ली ऑक्सीजन की कमी के कारण चर्चा का विषय बनी हुई है। आज हमें इस विषय पर विचार करना है कि ऑक्सीजन की कमी को किस प्रकार पूरा किया जा सकता है? क्या केवल ऑक्सीजन प्लांट लगाने मात्र से इस समस्या का हल हो जाएगा या फिर हम पर्यावरण की ओर भी ध्यान देंगे।

आज देश में ऑक्सीजन की कमी होने के जिम्मेवार कहीं न कहीं हम स्वयं भी हैं। अगर हमने विकास के नाम पर प्रकृति के साथ खिलवाड़ न किया होता, पेडों को अन्धाधुन्ध न काटा होता, नैसर्गिक जल के स्रोतों को नष्ट न किया होता तो हमें आज यह दिन न देखना पड़ता। विकास के नाम पर जंगलों को काटा गया, बारूद से बड़े-बड़े पर्वतों का सीना चीर कर सुरंगें बनाई गई, पेड़ लगाने के स्थान पर पेडों को काटा गया। नैसर्गिक जलस्रोतों को रोक कर बाँध बनाए गए, जिसके परिणामस्वरूप हमें केदारनाथ जैसी अनेक त्रासदियाँ देखनी पडी। इसलिए आज ऑक्सीजन की कमी को पूरा करने के लिए ऑक्सीजन प्लांट के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण की भी आवश्यकता है। बड़े-बड़े महानगरों में प्रदूषण की समस्या को दूर करना होगा। पिछले वर्ष जब 2 महीने का लॉकडाऊन लगा था तो पर्यावरण इतना स्वच्छ हो गया था कि बडे-बडे महानगरों से भी पहाड दिखाई देने लगे थे। इसलिए आज केन्द्र और राज्य सरकारों को चाहिए कि वे पर्यावरण संरक्षण की ओर विशेष ध्यान दें। पर्यावरण के संरक्षण से ही ऑक्सीजन की समस्या का स्थाई हल होगा।

आज पर्यावरण प्रदूषण विश्व की प्रमुख समस्या है। पर्यावरण के घटक तत्व हैं वायु, जल, भूमि, वृक्ष-वनस्पतियाँ। अथर्ववेद में सर्वप्रथम जल-वायु के अतिरिक्त औषधियों या वृक्ष वनस्पतियों को पर्यावरण का घटक तत्व बताया गया है। वेद में इन तत्वों को छन्दस् कहा गया है। छन्दस् का अर्थ है- आवरक या पर्यावरण। अथर्ववेद का कथन है कि जल-वायु और वृक्ष वनस्पति ये पर्यावरण के घटक तत्व हैं और ये प्रत्येक लोक में जीवनी शक्ति के लिए अनिवार्य हैं, यदि ये नहीं होंगे तो मानव का जीवित रहना सम्भव नहीं है। इन तत्वों के प्रदूषण या विनाश से पर्यावरण प्रदूषण होता है। आज विश्वभर में भूमि, जलवायु आदि सबको अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित किया जा रहा है। यांत्रिक उपकरण इस समस्या को और बढ़ा रहे हैं। जीवनी शक्ति प्राणतत्व या आक्सीजन के एकमात्र स्रोत वृक्ष वनस्पतियों को निर्दयतापूर्वक काटा जा रहा है। यदि वृक्ष नहीं होंगे तो मनुष्य को ऑक्सीजन नहीं मिल पाएगा और वह जीवित नहीं रह सकेगा। वैदिक ऋषियों ने पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए जलवायु और वृक्ष वनस्पतियों को प्रमुख साधन बताया है।

वायु संरक्षण- वेदों में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि और द्युलोक के संरक्षण की बात अनेक मन्त्रों में कही गई है। साथ ही वृक्ष वनस्पतियों के संरक्षण का आदेश दिया गया है। वेदों में वायु को अमृत कहा गया है। वायु जीवनी शक्ति देता है। इसको भेषज या औषधि कहा गया है। यह प्राणशक्ति देता है और अपानशक्ति के द्वारा सभी दोषों को बाहर निकालता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि हम ऐसा कोई काम न करें, जिससे वायुरूपी अमृत की कमी हो। यदि हम प्राणवायु को कम करते हैं तो अपने लिए मृत्यु का संकट तैयार करते हैं। ऋग्वेद में मन्त्र आया है कि-

वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे। प्र ण आयूँषि तारिषत्।।
उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा। स नो जीवातवे कृधि।।
यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसे।।

अर्थात् वायु हमारे हृदय के स्वास्थ्य के लिए कल्याणकारक आरोग्य कर औषधि को प्राप्त कराता है और हमारी आयु को बढ़ाता है। यह वायु हमारा पितृवत् पालक, बन्धुवत् धारक, पोषक और मित्रवत् सुखकर्ता है और हमें जीवन वाला करता है। इस वायु के घर अन्तरिक्ष में जो अमरता का निक्षेप भगवान द्वारा स्थापित है, उससे यह वायु हमारे जीवन के लिए जीवनतत्त्व प्रदान करता है। अथर्ववेद में मन्त्र आया है कि-

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रपः।
त्वं हि विश्वभेषज देवानां दूत ईयसे

अर्थात् वायु के संचार से शरीर का मल निकलकर स्वास्थ्य मिलता है और तार, विमान, ताप, वृष्टि आदि का संचार होता है।

जल संरक्षण-वेदों में जल की उपयोगिता और उसके महत्व पर बहुत बल दिया है। जल जीवन है, अमृत है, भेषज है, रोगनाशक है और आयुवर्धक है। जल को दूषित करना पाप माना गया है। जल के विषय में कहा गया है कि जल से सभी रोग नष्ट होते हैं। जल सर्वोत्तम वैद्य है। जल हृदय के रोगों को भी दूर करता है। जल को ईश्वरीय वरदान माना गया है। अनेक मन्त्रों में जल को दूषित न करने का आदेश दिया गया है। जल और वृक्ष वनस्पतियों को कभी हानि न पहुँचावें। पुराणों में तो यहाँ तक कहा गया है कि नदी के किनारे या नदी में जो थूकता है, मूत्र करता है या शौच आदि करता है, वह नरक में जाता है और उसे ब्रह्महत्या का पाप लगता है। ऋग्वेद में कहा गया है कि-

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये। देवा भवत वाजिनः।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस मन्त्र का भाष्य करते हुए लिखते हैं कि हे विद्वानों! तुम अपनी उत्तमता के लिए जलों के भीतर जो मार डालने वाला, रोग का निवारण करने वाला अमृतरूप रस तथा जलों में औषध हैं उनको जानकर उन जलों की क्रियाकुशलता से उत्तम श्रेष्ठ ज्ञान वाले हो जाओ। यजुर्वेद के छठें अध्याय के 22वें मन्त्र में कहा गया है कि मापो हिंसीः अर्थात् जल को नष्ट मत करो।

वृक्ष वनस्पति संरक्षण- वेदों और ब्राह्मण ग्रन्थों में वृक्ष वनस्पतियों का बहुत ही महत्त्व वर्णन किया गया है। वृक्ष वनस्पति मनुष्य को जीवनी शक्ति देते हैं और उसका रक्षण करते हैं। औषधियाँ प्रदूषण को नष्ट करने का प्रमुख साधन हैं। इसलिए उन्हें विषदूषणी कहा गया है। वेद में वृक्षों को पशुपति या शिव कहा गया है। ये संसार के विष कार्बनडाईआक्साईड को पीते हैं और इस प्रकार ये शिव के तुल्य विषपान करती हैं और प्राणवायु या ऑक्सीजन रूपी अमृत देती हैं। अतः वृक्षों को शिव का मूर्तरूप समझना चाहिए। इसी आधार पर ऋग्वेद में वृक्षों को लगाने का आदेश है। ये जल के स्रोतों की रक्षा करते हैं। एक मन्त्र में कहा गया है कि वृक्ष प्रदूषण को नष्ट करते हैं, अतः उनकी रक्षा करनी चाहिए।

इसलिए इस कोरोना के काल में हमें प्रकृति के महत्व को समझ कर उसके संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयास शुरू कर देने चाहिए। अपने आसपास खाली स्थलों पर पेड़-पौधे लगाने चाहिए। लोगों को पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति जागरूक करना चाहिए। अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए हमें आज वर्तमान में कुछ करना होगा। इस महामारी के भयानक दौर में अगर हमने पर्यावरण के संरक्षण के लिए प्रयास नहीं किए तो आने वाले समय की स्थिति का अनुमान लगाना बहुत मुश्किल है। इसलिए हम सभी का कर्त्तव्य है कि इस दिशा में मिलकर सकारात्मक प्रयास करें और पर्यावरण को स्वच्छ बनाएं।

प्रेम कुमार
संपादक एवं सभा महामन्त्री

''योग दर्शन''

ले.-डा. ज्योत्स्ना शास्त्री वेदाचार्य एम.ए., पी.एच.डी. प्राध्यापक डी.ए.वी. कॉलेज

भारतीय दर्शन छः हैं : न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग, मीमांसा और वेदान्त। इन छः दर्शनों में योगदर्शन का विशिष्ट स्थान है। पतञ्जलि मुनि द्वारा रचित यह दर्शन मनुष्य मात्र के जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। योग का आचरण करने वाला ही स्वस्थ, दीर्घायु, शान्त, प्रसन्न और सबल आत्मा वाला बन सकता है। सांसारिक विषय-वासनाओं में फंसा हुआ योगी नहीं। अपनी आत्मा को परमात्मा से जोड़ना ही योग है, समाधि है। योग को परिभाषित करते हुए मुनि कहते हैं-योगः चित्तवृत्तिनिरोधः अपनी चित्त की वृत्तियों को, कामनाओं को समेटना, अपने नियन्त्रण में, वश में करना ही योग है। गीता में ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग और ध्यान योग का वर्णन है। पतञ्जलि मुनि द्वारा प्रतिपादित योग राजयोग कहलाता है। भाँति-भाँति के व्यायामों को यद्यपि आजकल योग का नाम दे दिया गया है, परन्तु वह हठयोग या मात्र शरीर को स्वस्थ रखने के लिए किया गया व्यायाम है।

आज योग दर्शन नाम से उपलब्ध ग्रन्थ में चार अध्याय हैं। समाधिपाद, साधनापाद, विभूतिवाद और कैवल्यपाद। पतजलि मुनि ने जीवात्मा, परमात्मा और प्रकृति तीनों को नित्य माना है। जीवात्मा अनेक हैं और परमात्मा एक है। वह अनादि है, स्वयंभू है। वह जीवों को कर्मफल देने और अपने सामर्थ्य को प्रकट करने के लिए इस सृष्टि की रचना करता है। वह सृष्टि की रचना जड़ प्रकृति की सहायता से पंच महाभूत आकाश, वायु, जल, अग्नि, पृथ्वी, रचता है। जीव और परमात्मा चेतन है, प्रकृति जड़ है। परमात्मा ही उपास्य है, प्रकृति और प्रकृति से बने पदार्थ नहीं। चित्त को वश में करना योग द्वारा ही संभव है। मन को पूर्णरूप से विषय भोगों से हटाकर परमपिता परमात्मा से केन्द्रित करना ही समाधि है। प्रकृति तीन गुणों से बनी होने के कारण त्रिगुणात्मक कही गई है। सत्व, रज, तम, ये तीन गुण हैं। सत्व रजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः। सत्व प्रकाशशील है, रज चंचलता प्रधान है और तम अन्धकार मोह, विषाद प्रधान है। प्रकृति से महत्तत्व; अंहकार, चित्त, बुद्धि उत्पन्न होते हैं। प्रकृति के त्रिगुणात्मक होने से चित्त भी सत्व रज तम तीनों गुणों को धारण करता है। दर्शन में बुद्धि, अहंकार और मन-इन तीनों को मिलाकर चित्त कहा गया है। चित्त के त्रिगुणात्मक होने से वह अनेक स्वरूपों को प्राप्त करता है। चित्त तमोगुण से युक्त होकर अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्य को प्राप्त करता है। रजोगुण की अधिकता होने पर धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य को प्राप्त करता है। सत्वगुण की अधिकता से वह प्रकाशमय होकर विद्या अविद्या का भलीभान्ति विवेक कर प्रकृति पुरुष को अलग-अलग जानता है और संसार के भोगों से निवृत्त होकर एकाग्र होकर परमात्मा को पाने के लिए समाधिनिष्ठ हो जाता है।

चित्त में सत्वगुण की प्रधानता है। यह अचेतन होते हुए भी अत्यन्त सूक्ष्म है और इसमें आत्मा का प्रतिबिम्ब भासता है। चेतन जीव से प्रतिबिम्बित चित्त जड़ होता हुआ भी चेतन के समान दिखाई देता है। यह अलौकिक सामर्थ्य से युक्त है। शुद्ध एवं चेतन जीव को प्रकट करने का माध्यम यह चित्त ही है। जैसे लोहे का गोला आग में तपाने पर आग का गोला बन जाता है, निराकार आग इस लोहे के गोले में साकार और सीमित सी दिखाई देती है, उसी प्रकार जड़ चित्त चेतन जीव के संयोग से चेतन भासता है।

इस चित्त की पांच प्रकाश की अवस्थाएं हैं। क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरूद्ध। रजोगुण से अभिभूत चित्त अस्थिर, विषयों की ओर भागने वाला और मन इन्द्रियों को काबू न करने वाला होता है। तब कर्तव्य-अकर्तव्य का विवेक नहीं रहता। यह अवस्था क्षिप्त कहलाती है। क्रोध के आवेश में शास्त्र निषिद्ध कार्य करने की इच्छा वाला चित्त मूढ़ है। इसमें अच्छे-बुरे का भेद नहीं रहता। वह बुरे हिंसात्मक कार्यों की ओर भागता है। तमोगुण से अभिभूत हुआ चित्त निद्रा, तन्द्रा, प्रमाद और आलस्य से युक्त होता है। मादक पदार्थों का सेवन करने वाले जनों का ऐसा चित्त होता है। सत्व गुण के अविर्भाव से चित्त कुछ समय के लिए किसी विषय में केन्द्रित होता है, पर शीघ्र ही चंचल हो हट जाता है। क्षण भर के लिए लक्ष्य पर केन्द्रित होता है, यह चित्त की विक्षिप्त अवस्था है। दैवी गुणों से युक्त अथवा साधनारत योग जिज्ञासुओं का ऐसा चित्त होता है। बाहरी सांसारिक विषयों को हटाकर अन्तःकरण में किसी एक लक्ष्य पर एकाग्र किया गया चित्त एकाग्र कहलाता है। यह योगियों की प्रथम अवस्था है। इसमें मन की चंचलता कम हो जाती है। उसे जहाँ केन्द्रित करना चाहें, वह एकाग्र हो जाता है। सभी प्रकार की वृत्तियों को निरोध करने, रोकने वाला चित्त निरूद्ध कहलाता है। चित्त अपनी सहज अवस्था में शान्त होकर रहता है। वह शाश्वत सच्ची शान्ति को प्राप्त करता है। यह योग की अन्तिम अवस्था है। ऐसा चित्त केवल सिद्ध पुरुषों का ही होता है, जिन्होंने योग साधना से परमात्मा का साक्षात् कर लिया। इन पांचों अवस्थाओं में क्षिप्त, मूढ़ और विक्षिप्त चित्त की अवस्थाएं योग में अपेक्षित नहीं हैं।

चित्त की वृत्तियाँ

ये दो प्रकार की हैं-क्लिष्ट और अक्लिष्ट। दुःखदायी और दुःखरहित। चित्त अपनी पांच ज्ञानेन्द्रियों चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसना, त्वक् तथा पांच कर्मेन्द्रियों हस्त, पाद, पायु, उपस्थ, त्वक् और मन के माध्यम से जब सांसारिक विषयों के सम्पर्क में आता है तो स्वयं ही विषय का आकार ग्रहण कर लेता है। इस आकृति को इसकी वृत्ति कहते हैं। चेतन जीव के प्रकाश से जब यह चित्त वृत्ति प्रकाशित होती है तो चित्त को उपस्थित विषय का ज्ञान होता है। ऐसी अनित्य वृत्तियों का प्रवाह निरन्तर चलता रहता है और ये वृत्तियाँ क्षीण होकर संस्कार रूप में चित्त में स्थिर हो जाती हैं। वृत्ति और संस्कारों का अनवरत चक्र चलता रहता है। चित्त की वे वृत्तियाँ जो आत्मा को इस संसार में फैलाए रखती हैं, वे क्लिष्ट हैं, दुःखदायी हैं। ये ही कर्म एवं वासना की उत्पत्ति का कारण हैं। इन्हीं से काम, क्रोध, लोभ, मोह उत्पन्न होते हैं। मोक्ष में सहायक वृत्तियों को दुःखरहित या अक्लिष्ट कहा गया है, जो जड़ प्रकृति और चेतन परमात्मा का विवेचन करती है। ये चित्त वृत्तियाँ पाँच प्रकार की हैं। प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। प्रमाण सत्य ज्ञान है। जो तीन प्रमाणों प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम से प्राप्त होता है। विपर्यय मिथ्या ज्ञान है, जैसे रज्जु में सर्प की या शुक्ति में रजत की भ्रान्ति। जो वास्तविक नहीं होता। विकल्प शब्दज्ञान से उत्पन्न होने वाला सत्य, परन्तु वस्तु शून्य ज्ञान है। जैसे मृगतृष्णा के जल में स्नान कर आकाश पुष्प को धारण करने वाला वन्ध्या का बेटा या राहु का सिर। यह शब्द से तो उत्पन्न होता है, परन्तु इसकी वस्तु नहीं होती। ज्ञान का अभाव ही निन्द्रा वृत्ति है। इसे सुषुप्ति भी कहते हैं। यह सात्विक, राजस तामस भेद से तीन प्रकार की है। सात्विक निद्रा से जागा हुआ पुरुष अनुभव करता है कि मैं सुखपूर्वक सोया, मन प्रसन्न है। राजस निद्रा से उठा व्यक्ति कहता है कि मैं दुःखपूर्वक सोया। मेरा मन उद्विग्न है। तामसिक निद्रा से उठा व्यक्ति अनुभव करता है कि मैं गहरी निद्रा में सोया, पर मेरा मन भारी है। अनुभूत विषयों को न भूलना स्मृति वृत्ति है। स्मृति भी यथार्थ और अयथार्थ दो प्रकार की है। रज्जु सर्प का भान या स्वप्न स्मृति अयथार्थ है। विद्यमान पदार्थों की स्मृति यथार्थ स्मृति है।

इन पांच प्रकार की चित्त वृत्तियों को रोकने का उपाय है अभ्यास और वैराग्य। चित्त की स्थिरता के लिए किया गया प्रयत्न अभ्यास कहलाता है। इसमें चित्त की अन्तःवृत्तियों का निरोध होता है। विषयों में दोषदृष्टि से वैराग्य उत्पन्न होता है। वैराग्य से चित्त की बाह्य वृत्तियों को रोका जाता है। चित्त बहुत चंचल है। रथचक्र की तरह निरन्तर घूमता रहता है। इस चंचल चित्त को स्थिर करने के लिए दीर्घकाल तक निरन्तर शीत उष्ण आदि को सहना, इन्द्रियों का संयम, प्रणव का जाप, योगी गुरु का सान्निध्य, शास्त्र ज्ञान, आप्त वचनों का श्रद्धापूर्वक आचरण और योग के यम नियमों के आचरण की आवश्यकता है।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

ओ३म्

ले.-धर्मपाल कपूर 1135, सैक्टर 11, पंचकूला

ओ३म् नाम सबसे बड़ा, इससे बड़ा न कोय।
जो ओ३म् का सुमिरन करे, तो शुद्ध आत्मा होय।
स्वाँस-स्वाँस पर ओ३म् भज, वृथा स्वाँस मत खोय।
न जाने इस स्वाँस का, आवन होय न होय।।

ओ३म् अ+उ+म् तीन अक्षरों का समुदाय है। अकार, उकार और मकार के योग से 'ओ३म्' यह शब्द सिद्ध होता है। यह परमेश्वर का सबसे सर्वोत्तम एवं निज नाम है, जिसमें सब नामों के अर्थ आ जाते हैं। जैसा पिता पुत्र का सम्बन्ध है। वैसे ही ओंकार के साथ परमात्मा का सम्बन्ध है। इस नाम से ईश्वर के अनेक नामों का बोध होता है। जैसे अकार से (विराट्) जो विविध जगत् का प्रकाश करने वाला है। (अग्नि:) जो ज्ञानस्वरूप और सर्वत्र प्राप्त हो रहा है। (विश्व:) जिसमें सब जगत् प्रवेश कर रहा है। उकार से (हिरण्यगर्भ:) जिसके गर्भ में प्रकाश करने वाले सूर्यादि लोक है, और जो प्रकाश करने हारे सूर्यादि लोकों का अधिष्ठान है। इससे ईश्वर को हिरण्यगर्भ कहते हैं। हिरण्य के नाम और ज्योति, अमृत और कीर्ति हैं। (वायु:) जो अनन्त बल वाला सब जगत् का धारण करने हारा है। (तेजस्) जो प्रकाश स्वरूप और सब जगत् का प्रकाशक है। मकार से (ईश्वर:) जो सब जगत् का उत्पादक, सर्वशक्तिमान् स्वामी और न्यायकारी है। (आदित्य:) जो नाश रहित है। (प्राज्ञ:) जो ज्ञानस्वरूप और सर्वज्ञ है। संक्षिप्त में यह ओंकार का वर्णन किया गया है।

ओ३म् शब्द संस्कृत की 'अव' धातु से बना है, जिसका अर्थ है रक्षा करना। अत: जो व्यक्ति ओ३म् का उच्चारण करता है उसकी रक्षा होती है। इसकी महाध्वनि से ही सृष्टि निर्माण हुआ है। संसार की सभी ध्वनियाँ ओ३म् से निकलती हैं और अंत में इसी में समा जाती हैं। चाहे वे मंदिर की घंटियाँ हों, बस चलने या कूलर आदि की ध्वनियाँ हों, सभी से ओ३म् ध्वनि निकलती है। जिस प्रकार ब्रह्म एक है, वैसे ही उसका वाचक शब्द ओ३म् एक ही है। ओ३म् गायत्री छन्द है। आत्मा की चिकित्सा, आत्मा की कैवल्य प्राप्ति ओंकार का अध्ययन है। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है-'प्रणव: सर्ववेदेषु' अर्थात् सब वेदों में मैं ओ३म् हूँ अर्थात् ओ३म् कहने मात्र से रक्षा भी हो गई, सभी स्तुतियाँ भी हो गईं एवं सभी वेदों का सार भी प्राप्त कर लिया। अकार का उच्चारण करते ही होंठ खुल जाते हैं। ऐसा करने से ब्रह्मा का स्मरण होता है। उकार का उच्चारण करते ही होंठ गोलाकार हो जाते हैं। इससे विष्णु का स्मरण होता है। मकार का उच्चारण करते ही होंठ बंद हो जाते हैं। इससे महेश का स्मरण होता है। इस प्रकार अकार, उकार और मकार से क्रमश: ब्रह्मा, विष्णु, महेश के प्रतीक अक्षरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश ईश्वर के ही गुणात्मक नाम हैं। ईश्वर के गुणात्मक अगणित नाम हैं।

इसके अतिरिक्त ओ३म् में त्रैतवाद के दर्शन होते हैं। परमात्मा के तीन गुण हैं। सत्+चित्+आनन्द = सच्चिदानंद। आनंद से पूर्व सत्+चित् दो विशेषण हैं और आनन्द ही परमात्मा है। अ वर्ण आत्मा का प्रतीक है, क्योंकि उ ऊपर की ओर आनंद को प्राप्त करने के लिए मुड़ा हुआ है। अत: वह आनंद की खोज में परमात्मा की अनुभूति करना चाहता है। क्योंकि संसार में क्षणिक एवं नश्वर सुख तो है, परन्तु आनंद नहीं है। म् वर्ण प्रकृति का प्रतीक है जोकि सत् और जड़ है। इसके पास न ही चित् है और न ही आनंद है। अत: मानव जीवन में सुख, शांति और आनंद की प्राप्ति के लिए त्रैतवाद के वैदिक सिद्धान्त को अपनाना परमावश्यक है। पाणिनि ने ओ३म् के निम्नलिखित 19 अर्थ किये हैं-

1. सर्वरक्षक 2. गतिदाता 3. कांतियुक्त 4. प्रीतिदाता 5. तुष्टिदाता 6. सत्यज्ञानदाता 7. सर्वव्यापी 8. श्रवणशक्तिदाता 9. स्वामी 10. सर्वप्रदायक 11. सुकर्मा 12. सुकामना 13. तेज प्रदाता 14. वरणीय 15. प्राप्तव्य 16. रुद्र 17. दाता 18. विभाजक 19. वर्धक

अंग्रेजी भाषा में प्रयुक्त GOD शब्द भी ओंकार के साथ समानता रखता है। इसके अकार, उकार, मकार की भाँति क्रमश: उत्पादक, संचालक और संहारक अर्थों का परिचायक है। इसको अधोलिखित कारणों के कारण ही परमात्मा का सर्वोत्तम एवं सर्वश्रेष्ठ नाम कहा जाता है-

1. ओ३म् परमात्मा का सबसे प्रमुख नाम है। यह परमात्मा का तीन अक्षर वाला नाम है। मात्राओं की दृष्टि से दो मात्राओं वाला और अर्थों की दृष्टि से अनन्त है।

2. जैसे परमात्मा अपरिवर्तनशील है उसी प्रकार उसका ओ३म् नाम भी अविकारी है। सभी वचनों में, सभी विभक्तियों में और सभी लिंगों में यह एक जैसा रहता है। संसार की सारी भाषाओं में केवल ओ३म् ही एक ऐसी संज्ञा है जिसका कोई लिंग नहीं है।

3. ओ३म् परमात्मा का सर्वव्यापक नाम है। वेदों, ब्राह्मण ग्रंथों, उपनिषदों, दर्शनों, स्मृतियों, रामायण, महाभारत, गीता, पुराणों, बाईबल, कुरान, श्रीगुरु ग्रंथसाहिब आदि में ओ३म् शब्द मिलता है।

4. यह परमात्मा का प्राचीनतम नाम है। वेद में इसी नाम के जपने का आदेश है।

5. यह परमात्मा का स्वाभाविक नाम है। जब डकार निकलती है तो राम, कृष्ण, गॉड, अल्लाह न निकलकर केवल ओ३म् ही निकलता है।

6. ओ३म् परमात्मा का सरलतम नाम है। इसका उच्चारण सुगम एवं कोमल है। किसी व्यक्ति की जीभ कट गई हो तो उस तुतले एवं हकले व्यक्ति को सब ही जानते हैं। परन्तु गूंगा तो बेचारा सारी शक्ति लगाकर भी एक शब्द नहीं बोल सकता। परन्तु एक शब्द है जिसको बच्चा, बूढ़ा, जीभ कटा, तुतला, हकला एवं गूंगा भी बड़ी आसानी से बोल सकता है और वह शब्द है 'ओ३म्'। जीभ कट जाये, दाँत मुँह में न हों तो भी ओ३म् के उच्चारण में कोई अन्तर नहीं पड़ता। क्योंकि इसको बोलते समय जीभ एवं दाँत हिलने का कोई भी काम नहीं करते हैं। यहाँ तक कि जब मंदिर का पुजारी शंख बजाता है तो उसमें से भी ओ३म् की ध्वनि ही निकलती है।

7. ओ३म् शब्द सारी वाणी के विषयों को अपने अंतर्गत कर लेता है। वाणी की सीमा, कंठ, ओष्ठ और तालुगत नासाछिद्र हैं। कण्ठ से परे वाणी की गति नहीं है। ओष्ठ, उसके आगे भी कोई स्थान नहीं। तालुगत नासाछिद्र इससे परे भी स्थानाभाव है। इस प्रकार ओ३म् सारी वाणी की सीमा को अपने भीतर लेकर अर्थ युक्त होता है।

8. यह एक ओ३म् शब्द अनेक अर्थों का द्योतक है जैसा ऊपर वर्णित किया गया है।

9. वेद के प्रत्येक मंत्र के आरम्भ में इसी का उच्चारण किया जाता है क्योंकि ये मांगलिक माना जाता है।

10. गोपथ ब्राह्मण के अ, उ और म् क्रमश: ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव के वाचक हैं।

अत: प्रख्यात संत श्री राम ने सत्य ही लिखा है :-

ओ३म् शब्द में वह शक्ति है जो शरीर को अंदरूनी तौर पर रूपांतरित कर सकता है। यह आदि नाद है, किसी भाषा या धर्म की सम्पत्ति नहीं।

वस्तुत: वेद के सारे मंत्र ओ३म् का विस्तार हैं। ऋग्वेद का आरम्भ 'अ' वर्ण से होता है और इसका मुख्य विषय ज्ञान है। सामवेद का अंतिम वर्ण 'उ' है और इसका मुख्य विषय उपासना है। इसी प्रकार यजुर्वेद का अंतिम वर्ण 'म्' है जिसका मुख्य विषय कर्म है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अ से लेकर म् तक ही वाणी चलती है और इसी प्रकार ज्ञान, उपासना, कर्म के द्वारा ही विज्ञान की उत्पत्ति होती है, अथर्ववेद से विज्ञान का ज्ञान प्राप्त होता है। वैदिक धर्म में 'ओ३म्' शब्द को भक्ति एवं उपासना के क्षेत्र में सर्वोत्तम महत्ता प्राप्त है। अत: महर्षि दयानन्द जी ने अपने अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' के प्रथम समुल्लास के आरंभ में उचित ही लिखा है-

यह ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है क्योंकि इसमें अ, उ, म् तीन अक्षर मिलकर एक 'ओ३म्' समुदाय हुआ है।

(क्रमश:)

तरति शोकं आत्मवित्

ले.-कुसुम अग्रवाल 8, पेपर मिल, यमुनानगर

कुछ दिन पूर्व मेरी एक बहन ने मुझसे पूछा कि क्या परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है, यदि हाँ तो कितनी देर में। मैंने उत्तर दिया कि हाँ परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है और इतनी देर में, जितनी देर में एक बार पलक झपकती है। बहन ने पूछा कि यदि परमात्मा एक क्षण में मिल सकता है तो वह हमें अभी तक मिला क्यों नहीं। मैंने उत्तर दिया कि आपके जीवन में वह पल आया ही नहीं। क्योंकि परमात्मा को वही प्राप्त कर सकता है जिसने स्वयं को जान लिया।

कठोपनिषद् में प्रसंग है कि यम नचिकेता को 3 वर मांगने के लिये कहता है। नचिकेता तीसरा वर यह मांगता है कि उसे आत्मज्ञान दिया जाये। यम कहता है-तुम हाथी लो, घोड़े लो, सुन्दर-सुन्दर स्त्रियां लो, अकूत सम्पत्ति लो और इन सबका उपभोग करने के लिये सैकड़ों वर्षों की आयु लो। परन्तु इस गूढ़ ज्ञान की इच्छा न करो, क्योंकि अभी तुम बच्चे हो। परन्तु नचिकेता का उत्तर था- ''यम! यह सभी वस्तुएं अनित्य हैं, आज हैं कल नहीं तथा ये सभी वस्तुएं शरीर को जीर्ण करने वाली हैं। मुझे उस ज्ञान का उपदेश करें, जिससे मैं अमृत को प्राप्त कर सकूँ। यमाचार्य ने देखा कि नचिकेता बालक होते हुए भी मुमुक्षु है। उसे बातों में बहलाया नहीं जा सकता। उसे नचिकेता को आत्मज्ञान देना पड़ा।

याज्ञवल्क्य जी जब संन्यास की दीक्षा लेने लगे, तब उन्होंने अपनी दोनों पत्नियों मैत्रेयी और कात्यायनी को बुलाकर कहा कि वे दोनों उसकी धन सम्पत्ति को परस्पर बांट लें। कात्यायनी तो सहर्ष मान गई, परन्तु मैत्रेयी ने कहा-भगवन्! जिस वस्तु की खोज में आप मुझे और इस समस्त सम्पत्ति को छोड़ कर वन में तपस्या करने जा रहे हैं, वह अवश्य ही इन सबसे अधिक मूल्यवान होगी, अत: मैं भी आपका ही अनुसरण करूंगी।

मिथिला के राजा जनक याज्ञवल्वय ऋषि के प्रिय शिष्य थे। राजा जनक जिज्ञासु थे। एक बार जब ऋषि याज्ञवल्क्य मिथिला पुरी में आए तो राजा जनक ने उनसे उपदेश के लिये कहा। याज्ञवल्क्य ने कहा-आज मैं यह निश्चय करके आया हूँ कि तुम्हें कोई उपदेश नहीं दूंगा। राजा जनक को भी यह जिद् थी कि वह आज उपदेश लेकर ही रहेंगें। उन्होंने ऋषि से पूछा-भगवन्, किस वस्तु के प्रकाश में मनुष्य घर से बाहर जाता है, अपना आहार जुटाता है और पुन: अपने घर लौट आता है? ऋषि ने उत्तर दिया-सूर्य के प्रकाश में व्यक्ति अपने गतव्य स्थान को जाता है और सभी कार्य करके अपने निवास पर लौट भी आता है। जनक ने पूछा-यदि अमावस्या की रात्रि हो, आकाश में सूर्य और नक्षत्र भी न हों, तो व्यक्ति किस प्रकाश से अपने व्यवहार साधन करता है। जनक ने कहा यदि कहीं अग्नि जल रही हो तो उसी के प्रकाश में व्यक्ति अपने स्थान पर जाकर, कार्य करके लौट आता है। जनक ने पूछा-यदि कोई व्यक्ति जंगल में खो गया है। अंधेरी रात हो, अग्नि भी न हो, तब वह कैसे अपने कार्य करता है। ऋषि ने कहा-ध्वनि के आश्रय से व्यक्ति जंगल में भी घूम फिर लेता है। अन्त में जनक ने पूछा-भगवन्! यदि व्यक्ति अंधा, बहरा, गूंगा हो, जंगल बीयावान हो, तब वह व्यक्ति किस प्रकाश में फलफूल एकत्र करके अपने स्थान पर पहुंचेगा। ऋषि ने कहा-नेत्रहीन, मूक, बधिर, विकलांग अपने सभी कार्य आत्मा के प्रकाश में करते हैं। बस, इससे आगे मैं तुम्हें कुछ नहीं बताऊंगा। यह बताने का विषय नहीं है। गूंगे का गुड़ है। राजा जनक ने हार नहीं मानी। उन्होंने आत्म तत्त्व की खोज की, और डोर पा भी लिया और उन्होंने यह घोषणा कर दी-यदि सारी मिथिला नगरी को आग लग जाए, तब भी मेरा कुछ नहीं जाता।

हम अत्यन्त भाग्यशाली हैं कि ऋषियों-मुनियों ने जिसे पर्वतों की चोटियों पर, गुफाओं में बैठ कर प्राप्त किया, वह आज पुस्तकों के रूप में हमें उपलब्ध है। सभी मनीषियों ने जो जाना उसे उन्होंने कुछ ही शब्दों में इस प्रकार बताया-जैसे गूंज में सींक है, गूलर के फल में कीड़े हैं, नारियल में गिरी है, उसी प्रकार आत्मा हृदय गुहा में विद्यमान है, आत्मा में ही परमात्मा के दर्शन हो सकते हैं। परन्तु तब जब विषयों की ओर तीव्रता से भागती हुई इन्द्रियों रूपी घोड़ों का चलन बाहर से रोक कर भीतर की ओर कर दिया जाए। यही समाधि है, यही योग है। यही पुरुष आत्मवित् है, यही योगी है।

योगी की स्थिति कैसी होती है? उसकी उपलब्धियां क्या हैं? उस पर मनीषियों ने अपने जो अनुभव बताएं हैं, अब उन पर कुछ विचार प्रस्तुत है:-

शोक के सहस्र और भय के सैंकड़ों स्थान हैं, जो प्रतिदिन मूढ़ मनुष्यों पर ही अपना प्रभाव डालते हैं, विद्वानों पर नहीं। मन्दबुद्धि मनुष्य ही अप्रिय वस्तु की प्राप्ति और प्रिय वस्तु का वियोग होने पर मन ही मन दु:खी होते हैं। जो वस्तु नष्ट हो गयी, उसके गुणों का स्मरण नहीं करना चाहिए, क्योंकि जो आदरपूर्वक उस व्यक्ति या वस्तु का चिन्तन करते हैं, उसके प्रति आसक्ति का बन्धन नहीं हटता। जैसे सांप केंचुली का त्याग करता है और पुन: उस ओर नहीं देखता, नष्ट प्राय: वस्तु के प्रति ऐसा ही व्यवहार करना चाहिये। उसका बार-बार चिन्तन नहीं करना चाहिये, चिन्तन करने से दु:ख बढ़ता है, घटता नहीं।

रूप, यौवन, जीवन, धन संग्रह, आरोग्य तथा प्रियजनों का सहवास, ये सब अनित्य है। विद्वान् पुरुष को इसमें आसक्त नहीं होना चाहिये। मानसिक दु:ख को चिन्तन से और शारीरिक दु:ख को औषध से दूर करना चाहिये। शास्त्र ज्ञान के प्रभाव से ही ऐसा होना सम्भव है। जो विपत्ति प्रयत्न करने पर टल सकती है, ज्ञानी व्यक्ति उसके लिये प्रयत्न करता है।। परन्तु जो विपत्ति पूरे देश पर है, जो प्रयत्न साध्य नहीं है, उसके लिये शोक नहीं करता।

धन संग्रह करने में बहुत कष्ट होता है, उसे व्यय करने में भी कष्ट होता है। अधिक धन होने पर उसके प्रति तृष्णा भी बढ़ती जाती है। मनुष्य जीर्ण होता है, तृष्णा युवा होती जाती है। यदि कोई व्यक्ति सारी दुनिया की सम्पत्ति को चमड़े की भांति अपने शरीर पर लपेट ले तब भी तृष्णा शान्त नहीं होती। मनुष्य भविष्य में सुख प्राप्ति की आशा में धन दौलत, बन्धु बान्धव और मित्रों का संग्रह करता रहता है और एक दिन मृत्यु अचानक व्याध की भान्ति उसे दबोच लेती है। इसलिये आत्मज्ञानी न संग्रह करता है न ही संग्रहीत पदार्थों के नष्ट होने पर शोक करता है। ज्ञानी शोक छोड़कर साधना करता है। वह किसी भी व्यसन में आसक्त नहीं होता। कोई भी व्यसन अपनी क्षणिक सी क्रियावस्था में ही आनन्द देता है, क्रिया समाप्ति पर नहीं।

ज्ञानी व्यक्ति धैर्य के द्वारा काम वेग तथा उदर की, नेत्र के द्वारा हाथ और पैर की, मन के द्वारा आँख और कान की तथा सद्विद्या के द्वारा मन और वाणी की रक्षा करता है।

प्रश्न उठता है कि आत्मवित् योगी कर्म करे या कर्मों का त्याग कर दे, क्योंकि सीढ़ी की आवश्यकता छत पर जाने के लिये है। जो व्यक्ति छत पर चढ़ गया, उसे सीढ़ी की आवश्यकता नहीं है। इस सम्बन्ध में शास्त्रों का आदेश है कि योगी को लोक कल्याण की दृष्टि से कर्म करते रहना चाहिये। परन्तु कर्मों में आसक्ति नहीं होनी चाहिए, ताकि उसका अनुकरण वे सांसारिक व्यक्ति करते रहें जिन्हें अभी ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। आत्मज्ञानी कर्म तो करता है, पर वे कर्म निर्बीज होने के कारण फल (जाति, आयु, भोग) देने में असमर्थ होते हैं। जैसे लट्टू को वेग से घुमा कर छोड़ देने पर भी लट्टू उस वेग के कारण कुछ देर तक घूमता रहता है। इसी प्रकार आत्मज्ञानी शरीर छूटने तक इस प्रकार कर्म करता रहता है जैसे कोई व्यक्ति निद्रा में चलता है।

संसार में जो भी व्यक्ति जन्म लेता है, वह चाहे अमीर हो, गरीब हो, धार्मिक हो या पापी हो, सभी तीन प्रकार के दु:खों से (आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक) पीड़ित अवश्य होते हैं, पर अन्तर यह है कि ज्ञानी काटे ज्ञान से, मूर्ख काटे रोय।

वेदादि सभी शास्त्रों का सार यही है कि संसार एक गहरा सागर है, जिसे आत्मवित् ही सुगमता से पार करके अक्षय सुख, मोक्ष को प्राप्त करते हैं, अन्य नहीं। वर्तमान में दिनोदिन सुख सुविधाओं के अम्बार लगे होने पर भी आत्म हत्याओं का उछलता हुआ गुब्बार इसकी पुष्टि करता है।

शोक समाचार

आर्य समाज मंदिर डल्लेवाल जिला होशियारपुर के प्रधान चौधरी धर्मजीत सिंह की धर्मपत्नी श्रीमती कान्ता देवी का निधन 25 अप्रैल 2021 को हो गया। श्रीमती कान्ता देवी जी धार्मिक विचारों वाली महिला थी और आर्य समाज के कार्यों में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेती थी। उनमें सेवा भाव बहुत था और वह सरल रहन सहन रखती थीं। सत्संग के प्रति उनकी बहुत रूचि थी। उनका अन्तिम संस्कार वैदिक रीति से किया गया। परमपिता परमात्मा दिवंगत आत्मा को उनके द्वारा किए गए सत्कर्मों के अनुसार सद्गति प्रदान करें तथा शोक संतप्त परिवार को इस दुख को सहन करने की धैर्य शक्ति प्रदान करें। दुख की इस घड़ी में हम सभी शोक संतप्त परिवार के साथ हैं।

यशपाल वालिया होशियारपुर

पृष्ठ 4 का शेष-''योग दर्शन''

इन सारे उपायों से अभ्यास सुदृढ़ होता है। देखें, सुने हुए विषयों से वितृष्णा वैराग्य है। सांसारिक वासनाओं, इच्छाओं के अभाव से वैराग्य उत्पन्न होता है। माला-फूल चन्दन, वनिता, अन्न पान, धन, आदि देखे गए विषय हैं। स्वर्ग, अमृतपान, अप्सरा, दिव्यगन्ध रसरूप की प्राप्ति श्रुत विषय हैं। इन दोनों प्रकार के विषयों में आसक्ति का न होना वैराग्य है। चित्त को स्थिर करने में समाधि का भी महत्व है। ब्रह्म चिन्तन में पूर्णरूप से लीन व्यक्ति का ध्यान ही ध्येय बन जाता है और उसका एकाग्र चित्त समाधि में लीन हो जाता है। यह भी सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात भेद से दो प्रकार की है।

योग दर्शन में अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश ये पाँच क्लेश कहे गए हैं। ये चित्त के मल हैं। इन मलों के परिहार से ही चित्त निर्मल होता है और चित्त का प्रसादन होता है। प्रसन्न चित्त ही योग साधना में प्रविष्ट हो सकता है। चित्त प्रसादन के उपाय हैं-सुखी के साथ मित्रता, दु:खी और पीड़ितों के प्रति करुणा, असहायों के प्रति सहानुभूति पुण्यात्माओं की संगति में हर्ष और पापियों के प्रति उदासीनता प्रकट कर चित्त को निर्मल किया जा सकता है और अविद्या, राग, द्वेष, मलों का परिहार किया जा सकता है। राग, द्वेष, ईर्ष्या, दूसरे का अपकार करने की इच्छा, असूया और अमर्ष चित्त के मल हैं, जो उसे विक्षिप्त कर डालते हैं। चित्त के मलों को हटाने के लिए क्रिया योग करना आवश्यक है। तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान, क्रियायोग कहलाते हैं। सुख-दु:ख, सर्दी-गर्मी, लाभ-हानि को सहते हुए इन्द्रियों को विषयों से निवृत्त कर मन को शान्त करना तप है। परमात्मा का श्रेष्ठ नाम प्रणव का जप, गायत्री मन्त्र का ज्ञान, उपनिषद् वेद शास्त्रों का अध्ययन स्वाध्याय है। अपने समस्त कर्मों को तथा अपने आप को श्रद्धापूर्वक पूर्णरूप से ईश्वर को समर्पित कर देना ईश्वर प्रणिधान है। कायिक वाचिक मानसिक कर्मों को ईश्वर अर्पित कर फल की इच्छा का परित्याग ही ईश्वर प्रणिधान है।

अष्टाङ्गयोग

योग के आठ अंग हैं : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। इन आठ अंगों के पालन से अविद्या का नाश तथा यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति होती है। जैसे-जैसे साधक की अविद्या नष्ट होती है, उसकी प्रज्ञा बढ़ती जाती है। योग की पूर्ण सिद्धि से विवेक ख्याति प्राप्त होती है अर्थात् ज्ञेय की प्राप्ति होती है। यम पांच हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। कायिक वाचिक मानसिक हिंसा का सर्वथा परित्याग। अहिंसा है भूतमात्र के हित के लिए मन, वचन, कर्म से प्रति पल सत्य भाषण सत्य है। मन से, वचन से, कर्म से पराए द्रव्य की इच्छा न करना, किसी की वस्तु का अपहरण न करना अस्तेय है। इन्द्रियों को विषयों से निवृत्त करना, विशेष रूप से स्त्रियों में संयम रखना ब्रह्मचर्य हैं। विषय भोगों का, पदार्थों का केवल उतना ही संग्रह करना, जितना जीवन धारण के लिए अत्यन्त आवश्यक है अपरिग्रह है। शौच-सन्तोष तप स्वाध्याय ईश्वर प्रणिधान ये पाँच नियम हैं। शरीर और मन से मलों की शुद्धि शौच है। आवश्यकता से अधिक वस्तुओं के संग्रह की इच्छा न करना सन्तोष है। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, सुख-दु:ख द्वन्द्वों को सहना तप है। वेद पुराण आगम उपनिषद् का मनन चिन्तन करना स्वाध्याय है। ईश्वर का स्मरण एवं ध्यान करना ईश्वर प्रणिधान है। पुरुष की स्थिरता और सुख देने वाला आसन पद्मासन, वीरासन, भद्रासन आदि आसन है। बाह्य, आभ्यन्तर, बाह्याभ्यन्तर तीन प्रकार का प्राणायाम है, जिसका ध्येय है प्राणों को नियन्त्रित कर मन को एकाग्र करना।

इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटाकर मन को वश में रखना, उसे अन्तर्मुखी बनाना प्रत्याहार है। बाह्य या आभ्यन्तर के विषयों में चित्त को केन्द्रित करना धारणा है। बाहर सूर्यदेव या हिरण्यगर्भ में, आन्तरिक, नासिकाग्र, हृदयकमल या मस्तक स्थित ज्योति में चित्त को एकाग्र करना धारणा है। धारणाकाल में जिस लक्ष्य में चित्त लगाया है, उसी में एकाग्रता प्राप्त करना ध्यान है। ध्यान जब ध्येय बन जाए अर्थात् ध्याता, ध्यान और ध्येय की पृथक् प्रतीति न हो तो वह समाधि है।

योग द्वारा पंचमहाभूत आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी पर विजय प्राप्त हो जाती है और संकल्प शक्ति इतनी तीव्र हो जाती है कि योगी यथेच्छ कार्य जो परमेश्वर के नियमों के विरूद्ध न हों, करने में समर्थ हो जाता है। साधक को अणिमा, लघिमा, महिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, वशित्व आदि सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। कुछ साधक इन सिद्धियों को, विभूतियों को प्राप्त कर अपने ध्येय से भ्रष्ट हो जाते हैं और इन सिद्धियों में ही रमे रहते हैं। परन्तु आत्मा का समस्त बन्धनों से मुक्त होकर अपने मूल स्वरूप में स्थित होना ही कैवल्य है। कैवल्य की प्राप्ति ही योगी का चरम लक्ष्य है। बुद्धि से लेकर पंचमहाभूत पर्यन्त गुण पुरुष के भोग पदार्थ हैं। जब वे कृतकार्य हो जाते हैं तो अपने कारण में, प्रकृति में लीन हो जाते हैं और जीवात्मा से इनका कोई सम्बन्ध नहीं रहता और इन गुणों से विच्छेद ही मोक्ष है। योग दर्शन में क्लेश कर्म विपाक आशय से न छुआ हुआ पुरुष-विशेष ईश्वर है। वह अविद्या आदि क्लेशों से, पाप-पुण्य रूप कर्म से, उन कर्मों के फल और वासनाओं से रहित है। ईश्वर भूत, भविष्य और वर्तमान काल से कटा हुआ नहीं है। सर्वदा सर्वत्र विद्यमान है। वह नित्य मुक्त है। दिक् काल से अतीत है। गुरुओं का भी गुरु है। उसको प्राप्त करने का सबसे सरल उपाय ईश्वर प्रणिधान है। उसका श्रेष्ठ नाम प्रणव है। चित्त को भक्तिपूर्वक दृढ़ता से ईश्वर अर्पण करना सच्चे भक्त द्वारा ही सम्भव है। प्रत्येक को योग दर्शन का स्वाध्याय करना चाहिये और जीवन में आचरण करना चाहिये।

पृष्ठ 2 का शेष-आयुर्यज्ञेन कल्पताम्

हमारा सम्पूर्ण जीवन यज्ञ से श्रेष्ठ कर्म से समर्थ हो, प्राणों की शक्ति, दर्शन शक्ति, श्रवण शक्ति, पृष्ठ पीठ सभी यश से समर्थ हों। हमारे सभी क्रिया कलाप यज्ञ से समर्थ हों। हम प्रजापति परमेश्वर की सच्ची प्रजा बनें। स्वयं देव स्वरूप बनकर अपने को ही नहीं, अन्यों को भी सुखी बनाने में समर्थ हों तथा जीवन मुक्ति के साथ अमृतत्व को प्राप्त करें। हम ऐसे उत्तम कर्म करें कि विद्वानों से हमें सदैव शाबाशी मिलती रहे। हम अपने जीवन को यज्ञ का आकार प्रकार देते हुए सभी को प्रसन्न करने के लिए उद्यत रहें।

इस यज्ञीय भावना को रचनात्मक रूप देने के लिए साधनविहीन व्यक्तियों के उदाहरण तो बहुत मिल जाते हैं किन्तु सुसम्पन्न सज्जन प्राय: सुलभ होते नहीं हैं। यज्ञ को आचमन से आरम्भ करने वाले याज्ञिक जल के अमृत रूप को समझकर ब्रह्मामृत में सराबोर होने की कामना करते हुए स्वाहा का सुख बोधन करते हैं। उस दिन यह यज्ञ क्रिया फलित होती देखी हुई, जिस दिन सन्त एकनाथ पैदल गंगोत्री से कन्धे पर गंगाजल की कांवर लेकर रामेश्वर जी पर चढ़ाने जा रहे थे। उन्होंने वही जल मरुस्थल में प्यास से तड़पते गधे को पिला दिया और वह उठकर चल दिया। साथी साधुओं की निन्दा नकारने में सन्त एकनाथ ने क्षणभर की देर नहीं लगायी। देखो साक्षात् गंगाधर रामेश्वर भगवान् यहीं तृप्त होने आ गये और मुझे कांवर के बोझ से मुक्त कर दिया।

क्या आपको नहीं लगता-'स विशोऽनुव्यचलत्' (अथर्व. 15.9.1)। वह व्रात्य परमात्मा ऐसे आस्थावान् भक्तों की ओर विचरण हो जाता है। धर्मराज युधिष्ठिर योगिराज कृष्ण की भाँति ही यज्ञ प्रेमी थे। राजसूय यज्ञ इसका संकेतक है। उनके जीवन में यज्ञ ज्योति जाज्वल्यमान थी। महाभारत जैसे युद्ध के मध्य भी वे लड़ाई के बाद रात्रि वेश बदल कर घायल सैनिकों की पीड़ा कम करने के लिये युद्ध क्षेत्र में चले जाते हैं। एक दिन अनुज सहदेव ने इस निमित्त उन्हें वेश बदलते देख लिया और कहा, यह तो ठीक है कि आप घायलों की वेदना कम करने के लिये जाते हैं किन्तु वेश क्यों बदलते हैं? उन्होंने कहा, यदि मैं अपने असली वेश में जाऊँगा तो शत्रु सैनिक मेरी इस सेवा को ठुकरा सकते हैं। उस दिन सहदेव ने भी यज्ञ धर्म के रहस्य को समझ लिया था। हमने स्वाहा को कितना सराहा-आइये विचार करें।

अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ के प्रधान बने जेबीएम ग्रुप आफ कम्पनीज के चेयरमैन श्री सुरेन्द्र आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की शिक्षाओं को जन-जन तक पहुंचाने में अपना अतुलनीय योगदान देने वाले, पिछली तीन पीढ़ियों से अपने परिवार को कट्टर आर्य समाजी संस्कारों की पूंजी प्रदान करने वाले पूज्य श्री रामेश्वर दास आर्य के सुपौत्र एवं आर्य विचारधारा के प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित पंडित फूल चन्द शर्मा निडर के दोहित्र, जेबीएम ग्रुप ऑफ कंपनीज के चेयरमैन श्री सुरेन्द्र आर्य जी को 24 अप्रैल 2021 को अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ के ऑनलाईन अधिवेशन में सर्वसम्मति से प्रधान मनोनीत किया गया। अधिवेशन की अध्यक्षता वरिष्ठ उपप्रधान धर्मपाल गुप्ता ने तथा संचालन महामन्त्री जोगिन्द्र आर्य ने किया। श्री सुरेन्द आर्य जहाँ एक तरफ भारत और विदेशों में सफल उद्योगपति के रूप में विख्यात हैं, वहीं आपने अपने जीवन काल में आर्य समाज की विचारधारा के प्रचार-प्रसार और विस्तार में अहम भूमिका निभाई है, विचार टीवी नेटवर्क के आप चेयरमैन हैं, आर्य समाज के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय आयोजनों में आपका परिश्रम, पुरूषार्थ और सहयोग अत्यन्त प्रशंसनीय और अनुकरणीय रहा है। आपने हमेशा बोलने से ज्यादा कर दिखाने में विश्वास रखा है। प्रधान मनोनीत किए जाने पर श्री सुरेन्द्र आर्य जी ने अपने उद्बोधन में आर्य समाज के उत्थान और विस्तार पर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ पिछले 50 वर्षों से लगातार आदिवासी बहुल क्षेत्रों में वैदिक विचारधारा फैला रहा है। हमारे आर्य विद्यालय, गुरूकुल, छात्रावास, बालवाडी इत्यादि अनेक प्रकल्प सफलतापूर्वक चल रहे हैं। भविष्य में यह कार्ययोजना और विस्तार प्राप्त करेंगी ऐसा मुझे विश्वास है। उन्होंने आधुनिक तकनीक के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने और आर्य समाज को ऊंचाई तक पहुंचाने की कल्पना प्रस्तुत की। अखिल भारतीय दयानंद सेवाश्रम संघ के उपप्रधान श्री विनय आर्य ने बधाई देते हुए कहा कि आपके कुशल निर्देशन में अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ बुलन्दियों को छू लेगा। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान धर्मपाल आर्य, सार्वदेशिक सभा के मन्त्री प्रकाश आर्य, बंगाल सभा के प्रधान दीनदयाल गुप्त, उद्योगपति ओम प्रकाश गोयल, शत्रुघ्न गुप्ता (रांची), स्वामी धर्मानन्द सरस्वती (उड़ीसा), वाचोनिधि आर्य (गुजरात), लोकेश आर्य (असम), दयासागर (छत्तीसगढ़), सत्यानन्द आर्य (दिल्ली), आचार्य शरत चन्द्र (झारखण्ड़), आचार्य जीव वर्धन (राजस्थान), विश्वास सोनी (मध्यप्रदेश) के साथ-साथ अधिवेशन में ऑनलाईन उपस्थित समस्त महानुभावों ने सुरेन्द्र कुमार आर्य के नेतृत्व में विश्वास करते हुए अपनी शुभकामनाएं दी।

श्री सुरेन्द्र आर्य जी

जोगिन्द्र खट्टर महामन्त्री
दयानन्द सेवाश्रम संघ

अन्तर्राष्ट्रीय यज्ञ दिवस के अवसर पर नीचे दिए गये चित्रों में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री श्री विपिन शर्मा, श्री रणजीत आर्य, श्री विजय सरीन, अधिष्ठाता साहित्य विभाग श्री एस.एम. शर्मा, अधिष्ठाता वेद प्रचार श्री सत्य प्रकाश उप्पल अपने-अपने परिवार के साथ यज्ञ करते हुए।

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड़ जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित।
सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org